International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 14-04-2025, Accepted: 15-05-2025, Published: 30-05-2025
Volume 11, Issue 2, 2025, Page No. 46-47

लोक जीवन की परिधि में कृष्णा सोबती के उपन्यास

पूनम लाकरा[1], आर. पी. गंगवार[2]
[1] शोधार्थी, हिंदी विभाग, बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, लखनऊ, उत्तर प्रदेश, भारत
[2] प्रोफ़ेसर, हिन्दी विभाग, बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, लखनऊ, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश
आधुनिक युग की सुविख्यात रचनाकार कृष्णा सोबती का नाम उन महिला कथाकारों में बड़े अदब से लिया जाता है, जिन्होंने अपने उपन्यासों के जरिए गाँव की आबोहवा तथा संस्कृति को जन–जन तक पहुँचाया। गौरतलब है कि उनके बचपन का अधिकांश समय गाँव के सौहार्दपूर्ण वातावरण में बीता था जिससे उन्हें लोक संस्कृति को करीब से जानने–समझने का अवसर प्राप्त हुआ। यही कारण है कि अपना ज्यादातर समय दिल्ली जैसे महानगर में व्यतीत करने के बावजूद भी उनके अंतः स्थल में गाँव की अनुभूतियाँ एवं स्मृतियाँ रची–बसी थी, जो विभिन्न उपन्यासों के जरिए समय–समय पर आकार ग्रहण करती रहीं। जैसे–'मित्रो मरजानी', 'डार से बिछुड़ी', 'जैनी मेहरबान सिंह', 'चन्ना' तथा 'जिंदगीनामा' इत्यादि।

मूल शब्दः लोक संस्कृति, कृष्णा सोबती, गाँव का जीवन, महिला कथाकार, उपन्यास साहित्य

आधुनिक महिला कथाकारों में कृष्णा सोबती अग्रणीय स्थान रखती हैं, जिनकी बहुत–सी कृतियाँ गाँव के स्वछंद वातावरण एवं मिट्टी की सोंधी महक से जेन सामान्य को अनुप्राणित करती हैं। इन्हें पढ़कर सच्चे अर्थों में लोक चेतना से प्रत्यक्ष तादाद्म्य स्थापित होता है।
इनमें कहीं बचपन का भोलापन झलकता है, कहीं प्रकृति के मनोरम दृश्यों का चित्रण आकर्षित करता है और कहीं वक्त के साथ परिवर्तित होती संस्कृति का प्रभाव परिलक्षित होता है।

लोक जीवन को प्रतिफलित करते प्रमुख उपन्यासः
कृष्णाजी को औपन्यासिक रचना में अभूतपूर्व सफलता मिली। उनका यह सफर डार से बिछुड़ी–1958 से शुरू होकर चन्ना–2019 में जाकर थमा। इस अवधि के दौरान उन्होंने विविध विषयों पर आधारित अनेक उपन्यास लिखे। वे रचनाएँ खासा लोकप्रिय हुई, जिनमें लोक जीवन के साथ–साथ नारी संवेदनाओं को भी प्रमुखता दी गयी है। इस दृष्टि से डार से बिछुड़ी, मित्रो मरजानी, 'जैनी मेहरबान सिंह',जिंदगीनामा तथा चन्ना उल्लेखनीय हैं।
'डार से बिछुड़ी' की कथावस्तु उस पृष्ठभूमि में गढ़ी गयी है, जहाँ अंतर्जातीय और प्रेम विवाह पूर्णतः वर्जित समझा जाता है। यह उपन्यास एक किशोरी 'पाशो' की दारुण दासताँ पेश करता है, जो अपनी माँ की गलती की सजा भुगतने के लिये मजबूर है। माँ की अनुपस्थिति में वह अपनी नानी तथा मामा–मामी के संरक्षण में पलती और बड़ी होती है। अपने मामा के शंकालु एवं संकुचित विचारधारा के कारण उसे घर की चारदीवारी में बंद रहकर कठोर अनुशासन का पालन करना पड़ता है। मात्र सुनी–सुनाई बात का हवाला देकर उसे बुरी तरह मारा–पीटा जाता है। यहाँ तक कि मेले में घुमाने ले जाने के बहाने उसे जान से मारने की साजिश भी की जाती है। षड्यंत्र की आहट मिलते ही वह घर से भागकर अपनी माँ के पास शरण लेती है, जो अंतर्जातीय विवाह करके शेखों की हवेली जा बसी थी। पर उसकी सुनवाई वहाँ भी नहीं होती। दुगुने उम्र के व्यक्ति दीवान के हाथों उसका सौदा कर दिया जाता है। वह कुछ दिन तो वहाँ सुख–चौन से रहती है, परन्तु जल्द ही दीवान की मृत्यु हो जाने से उसका जीवन पुनः अंधकारमय हो जाता है। फिर तो वह एक से दूसरे हाथ की कठपुतली बनकर स्थायित्व की तलाश में दर–ब–दर भटकती रहती है और परिस्थितयों को नियति समझकर शांत भाव से यातनाएं सहती है।
इस उपन्यास के हवाले से कृष्णाजी ने तत्कालीन समाज में विधवाओं की मार्मिक दशाओं को उद्घाटित किया है। इसमें नारी मन की गुत्थियों और सामाजिक यथार्थ का जिस बारीकी से चित्रण हुआ है वह काबीले तारीफ है। इसकी सफलता का वर्णन करते हुए इसकी भूमिका में वह लिखती हैं–
"डार से बिछुड़ी का सीधा–सादा पाठ बिना किसी शिल्प के सहारे स्वयं ही अपने समय के सूत्र बुनता गया और मेरे बाहर के कथ्य को कहानी की आंतरिकता की ओर मोड़ ले गया। मुझे इस दबाव का अहसास तक न हुआ। इतना ही लगा कि मैं इसे मात्र प्रस्तुत करने के निमित हूँ। निकश ने जब इसे विशेष कृति करके छापा तो देखकर विस्मय हुआ और न ही विशेष उल्लास"।[1]
'मित्रो मरजानी' राजस्थान के ग्रामीण परिवेश एवं संस्कृति को अपने में समेटे हुए है। इसकी नायिका मित्रो सभी पारम्परिक मान्यताओं को ध्वस्त करते हुए नारी स्वतंत्रता एवं समानता की माँग करती है। वह खुले विचारों की है और उसका विद्रोही स्वर उन तमाम सामाजिक बंधनों का विरोध करता है, जो महिलाओं को उनके अधिकारों से वंचित रखते हैं। मित्रो की चारित्रिक विशेषताओं के द्वारा यह स्पष्ट किया गया है कि आधुनिक युग में किस प्रकार गाँव की नैतिक व सामाजिक मान्यताओं की जड़ें कमजोर पड़ रही हैं। वह अपनी भावनाओं, इच्छाओं और विचारों को दृढ़तापूर्वक परिवार के सामने रखती है और स्त्रियों के लिये समाज द्वारा निर्धारित घूँघट प्रथा तथा अन्य वर्जनाओं का विरोध करती है। आगामी चिंता–फिक्र से मुक्त वह वर्तमान की खुशहाली पर विश्वास रखती है–"अरी, खा–पी, मौज करो इस बुलबुले का क्या भरोसा आज है कल नहीं"।[2]
उपन्यास 'जिंदगीनामा' गाँव की रंगत से पूर्णतः सराबोर है। इसके पात्रों के रूप में डेराजट्टा गाँव के स्त्री–पुरुष सम्मिलित हैं, जो कभी शाहजी की मजलिस और कभी शाहनी की मंडली के जरिए वहाँ की एकता व सौहार्दता की कहानी कहते हैं। पारम्परिक रूप से महिलाओं व युवतियों द्वारा मिल–जुलकर चरखा कातना, तंदूर–चूल्हों पर तरह–तरह के व्यंजनों का पकाया जाना, तीज–त्योहारों की सामूहिक धूम, लोक कथाओं व लोक गीतों का बाहुल्य, बच्चे की चाह में भगवान के दरबार की गुहार तथा विशेष अवसरों पर घर–घर लिपाई–पोताई आदि सभी प्रक्रियाएँ पाठकों को लोक संस्कृति से जोड़ती हैं। एक तरफ तो प्राकृतिक अनुपम की छटा मन को मोह लेती है और दूसरी ओर गाँव की समृद्धि के बहाने पूरे पंजाब की खुशहाली बयाँ होती है–

"भंडार घरों में मक्का और बाजरे की महक से सराबोर हर घर का अंदर और बाहर। वह खुशहाल धरती का खुशहाल लशकारा आँखों की प्यास बनकर हर चौके की चंगेरों के सगुन मनाता रहा। खाने–पहनने और जी भर–भर जी लेने की रीझें। जहाँ का हर मेहनतकश बादशाह अपने सिर के साफे को अपना ताज समझ सम्भालता रहा और अपने खेतों को अपना ऋजक समझ सत्कारता रहा" ।[3]

यहाँ हीर–राँझे की तर्ज पर अनेकों प्रेम गाथाओं का खूबसूरत वर्णन हुआ है और सौतिया डाह की चर्चा भी जोरों–शोरों से होती है। देसी व विदेशी राजनीतिक गलियारों की ऐतिहासिक घटनाएँ भी आकर्षित करती हैं तो कोट–कचहरी के कानूनी दाँव–पैंच और पुलिस महकमे की कार्यवाहियाँ भी औप्न्यासिक कथा वस्तु को गतिमान बनाए रखती हैं। इसमें शोषण पीड़ित किसानों की दारुण दासताँ भी उल्लिखित है और जमींदारों व साहुकारों का बड़प्पन भी दर्ज है। यह अपनी आंचलिकता, काव्यात्मकता, किस्सागोई शैली, भाषिक विविधता तथा चित्रात्मकता के लिये खासा चर्चित रहा। इसका विराट स्वरूप कहीं भारत–पाक विभाजन की पीड़ा और स्वतंत्रता सेनानियों के गौरव गाथाओं से आप्लावित है और कहीं महाराज रणजीत सिंह की कुशल राजनीति और वीरता से परिपूर्ण। साथ ही इसके माध्यम से मनोरंजन के पारम्परिक साधन जैसे–सरकस, तमाशा एवं लोक नृत्य आदि की महत्ता के साथ–साथ भक्ति भावों की अभिव्यंजना भी हुई है–

"मनसा करत सुख चरण तिहारे मेरी मुरादें परसऊ प्यारे जो सुख आवे सो फल पावे ग़ौस नबी को लागे प्यारे! मनसा करत सुख चरण तिहारे"! ।[4]

'चन्ना' उपन्यास का ताना–बाना मुख्य रूप से इसकी प्रमुख किरदार चन्ना के इर्द–गिर्द बुना गया है। उसका जन्म ननीहाल में हुआ, जहाँ सिर्फ बेटे का जन्मोत्सव धूमधाम से मनाया जाता है। परन्तु चन्ना का जन्म संयोगवश हुआ था, जिससे नाना–नानी तथा परिवार के अन्य लोग बहुत खुश थे। अतः देवी का आशीर्वाद समझकर तहे दिल से उसका स्वागत किया जाता है। सामाजिक मान्यताओं को दर किनार करके पूरे गाँव भर में मिठाइयाँ बाँटी जाती हैं। शहर में पिता के यहाँ बधाई के तौर पर सभी को मिठाई के साथ उपहार भेजे जाते हैं।

बचपन के कुछ वर्ष उसने ग्रामीण परिवेश में बिताए। माँ और नानी की मृत्यु के बाद अच्छी परवरिश और पठन–पाठन के लिये उसे शहर जाना पड़ा, जहाँ पिता और सौतेली माँ के संरक्षण व सईदा बीबी के लाड़–प्यार में वह पली–बढ़ी। उसके नाना (शाहजी) गाँव के बहुत बड़े जमींदार और पिता जाने–माने व्यापारी थे। लिहाजा रुपये–पैसों की उसे कोई कमी नहीं थी। फिर भी बड़ी होने पर उसके व्यक्तित्व का बाहरी आवरण शहरी ताने–बाने में लिपटा नजर आता है, किन्तु आंतरिक स्वभाव की संरचना पूर्णतः ग्रामीण परिवेश के साँचे में ढल जाती है। वह अपने अधिकारों के प्रति सजग रहती है। वक्त पड़ने पर कठिन निर्णय लेती है और दोनों परिवारों के प्रति अपने दायित्वों का निर्वहन भली–भाँति करती है। उसके स्वभावगत विशेषताओं पर प्रकाश डालते हुए कृष्णाजी ने लिखा है–

"उसमें तर्क से काट–छाँट करने वाली बुद्धि नहीं, क्योंकि वह पुरुष नहीं। नारी की तरह भावनाओं में बह जाने वाली भावुकता नहीं, क्योंकि वह नारी से अधिक कुछ है। वह अपने विश्वास का आधार लेकर खड़ी रह सकती है। जीवन की लहरों में से मथकर निकल सकती है" ।[5]

गाँव की आबो–हवा उसके जीवन में इस कदर रच–बस गयी थी कि वह विवाह के सम्बन्ध में किसी ठोस नतीजे पर नहीं पहुँच पाती है। जबकि अपने कॉलेज के दिनों में वह कई युवकों से मिलती है तथा उसके लिये बलवंत सिंह और कमल जैसे योग्य और प्रतिष्ठित युवकों का प्रस्ताव आता है, जो देश–विदेश में काम करने का अच्छा अनुभव प्राप्त कर चुके हैं। जब अपने प्रिय जनों को खो देने के बाद वह नितांत अकेली रह जाती है तो कमल उसे आगे की पढ़ाई हेतु मुम्बई जाने का सुझाव देता है, फिर भी वह गाँव के प्रति अपने गहरे लगाव को सर्वोपरि रखती है–

"हरी–भरी जमीनें, जमीनों में कुएँ, वह सब मेरे हैं कमल! उन्हें क्या मैं छोड़ जाऊँगी। मैं स्वयं ग्रामीण हूँ, मैं वहीं पैदा हुई, वहीं पली और आज भी मैं अपने इन कपड़ों के अतिरिक्त जो कुछ हूँ ग्रामीण हूँ। तुम नहीं समझोगे कमल, उस मोह को" ।[6]

चुलबुली जैनी कनाडा में पली–बढ़ी। अपने पिता की मृत्यु के बाद अकेलेपन से उभरने तथा उनके सपने को हकीकत में बदलने के लिये सब कुछ छोड़कर गाँव का रुख कर लेती है। जहाँ उसे दादी, रिश्तेदारों और दोस्तों का भरपूर प्यार मिलता है और अपनेपन का अहसास उसे तरोताजा कर देता है। खानदानी दुश्मनी के बावजूद वह ज़ोरावर से विवाह करके अपने पैत्रिक गाँव की हो जाती है।

"जैनी दादी से प्यार ले दादी को प्यार दे अपने कमरे में पहुँची तो कोई पुरानी धुन हवा में लहरा गयी। दो–चार बार नृत्य के कदम उठाए। अजीब बात है जिस घर जिस धरती को हमेशा पपा की आँखों से देखा वह सचमुच में पराई नहीं लगती। मुझे यहाँ पराया नहीं लगेगा। पपा जरूर इतना जानते होंगे। दिल के अंदर झाँकती हूँ तो लगता है पपा की बेटी हूँ। बाहर देखती हूँ तो महसूस होता है दादी की बच्ची हूँ। सिर्फ यहाँ का आसमान नया लगता है। वहाँ का नीला आकाश और उसमें घुली–मिली शनीचर की शामें" ।[7]

देश–विदेश की मिश्रित संस्कृति को प्रदर्शित करती इस छोटी–सी पटकथा में कृष्णा सोबती ने कनाडाई सरजमीं की आर्थिक सम्पन्नता तथा मौज–मस्ती के साथ–साथ पंजाब के गाँव की खुशहाली और प्राकृतिक सुंदरता का मनमोहक चित्र उकेरा है–

"पट्टिवाल नजर आने लगा था। खेत–खलिहान धूप में चमकते। धूप में चमकती रंग–बिरंगी ओढ़नियाँ। लाल, पीली, हरी, गुलाबी" ।[8]

निष्कर्ष:

स्पष्ट है कि कृष्णाजी की रचनाओं में ग्रामीण समाज, परिवेश व संस्कृति की पुरजोर चर्चा हुई है, जिनके जरिए आंचलिकता की सरसता को महसूस किया जा सकता है। इनके माध्यम से गाँवों में रहने वाले लोगों की सरलता, सहजता एवं सादगी की झलक मिलती है। विभिन्न किरदारों के हवाले से उन्होंने ग्राम्य जनजीवन की वस्तु स्थिति, मूलभूत समस्याओं और वास्तविकताओं से प्रत्यक्ष संवाद स्थापित करने का भरसक प्रयास किया है। परिणामस्वरूप चन्ना तथा जैनी जैसी पात्र शहरों की उदासीन जिंदगी से ऊबकर सहसा ग्रामीण जनजीवन की ओर आकर्षित होती हैं।

संदर्भ सूची

1. 'डार से बिछुड़ी', कृष्णा सोबती, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, 1958, पृ. सं. 7
2. 'मित्रो मरजानी', कृष्णा सोबती, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, 1966, पृ. सं. 81
3. 'जिंदगीनामा', कृष्णा सोबती, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, 1979, पृ. सं. 11
4. 'जिंदगीनामा कृष्णा सोबती, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, 1979, पृ. सं. 183
5. 'चन्ना', कृष्णा सोबती, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2019, पृ. सं. 216
6. 'चन्ना', कृष्णा सोबती, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2019, पृ. सं. 371
7. जैनी मेहरबान सिंह, कृष्णा सोबती, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2007, पृ. सं. 67–68
8. 'जैनी मेहरबान सिंह', कृष्णा सोबती, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2007, पृ. सं. 88